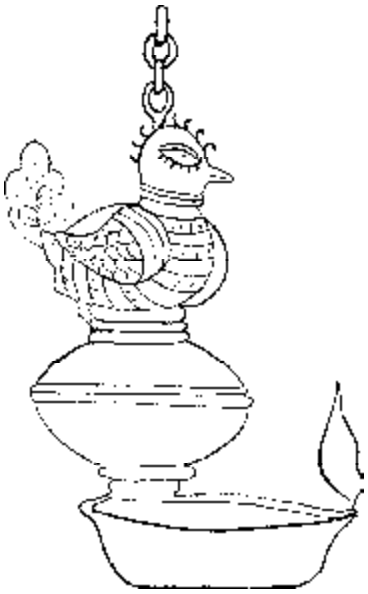

पुस्तक समीक्षा

अक्कम से पुरम तक

लोक कथाओं की समीक्षा

तेजी ग्रोवर

इस लेख में हम बाल-साहित्य की दुनिया में हो रहे एक रोचक प्रयोग पर विस्तार से बात करने जा रहे हैं। लोक कथाओं की 'अक्कम' (यानी घरेलू) बानगी से वे 'पुरम' (सार्वजनिक और अधिक विवरणों सहित) कहानियों में कैसे रूपायित की जाती हैं, यह हम तूलिका प्रकाशन, चैन्नई द्वारा प्रकाशित कुछ पुस्तकों की समीक्षा करते हुए देखने की कोशिश करेंगे। इस रूपान्तरण के दौरान सन्दर्भ को देखकर कहानी में जो जोड़ा या घटाया जाता है, उसे हम कन्नड़ और अँग्रेज़ी लेखक ए.के.रामानुजन के शब्दों में 'सन्दर्भ संवेदनशीलता' कह सकते हैं। यों रामानुजन 'सन्दर्भ संवेदनशीलता' को किसी और अर्थ में हमारे सामने रखते हैं --- कि उनमें किसी घटना, कृति या नैतिक विचार में उसका विशिष्ट या देशज सन्दर्भ मुख्य होता है या कि गौण। लेकिन इस लेख में हमने उनके अर्थों को कुछ और भी विस्तार दे दिया है।

तूलिका प्रकाशन, चैन्नई द्वारा बच्चों के लिए सचित्र लोक कथा सीरीज़ पर चर्चा से पहले हम कोमल कोठारी और रुस्तम भड़ूचा के बीच हुई बातचीत से एक प्रसंग का उद्धरण यहाँ देंगे। कोमल दा ने राजस्थान के लाँगा और माँगनियार गायकों के साथ वर्षों तक काम किया था और बाहर के कई देशों की जनता तक भी इस संगीत को पहुँचाया -- शोध और

रिकॉर्डिंग के काम में भी निर्णायक भूमिका निभाई। रुस्तम भड़ूचा को उन्होंने और कई किस्सों के साथ-साथ यह किस्सा भी सुनाया।

एक बार अमरीका में यात्रा करते समय संगीत के कार्यक्रमों में कुछ दिन का अवकाश था। कोमल दा और उनके संगीतज्ञ साथियों को एक रैन बसेरे में ठहरा दिया गया। वह रैन बसेरा, दरअसल, एक वृद्ध-आश्रम था, जिसमें रहने का खर्चा ज़्यादा नहीं था। यह जगह न केवल राजस्थानी गायक मण्डली के लिए अजीब थी, बल्कि उन वृद्ध जनों को भी काफी अजीब लगा होगा जिनमें से कुछ काफी कमज़ोर और शारीरिक रूप से लाचार थे। अचानक वे लोग धोती-कुर्ता पहने दाढ़ी-मूँछ वाले शोख पगड़ीधारी विचित्र जीवों से घिर गए थे। वे एक-दूसरे की भाषा भी नहीं समझते थे और अभिवादन आदि के अलावा गायक लोग उन बुज़ुर्गों के लिए सामान ढोने और दरवाज़ा खोलने जैसी कुछ चीज़ें कर दिया करते थे। जब जाने का समय आया तो गायकों ने सोचा कि वे अपने मेज़बानों को अपना गाना सुनाएँगे, बिना किसी तैयारी के जो घटना घटी वह कोमल दा के लिए 'अभूतपूर्व' थी।

वृद्ध-आश्रम की बैठक में इन रंगीले गायकों ने अभी कुछ ही गाने गाए होंगे कि कोमल दा को एक खास किस्म की रूँ-रूँ सुनाई देने लगी। कुछ ही देर में यह आवाज़ रोने में और उसके बाद सुबकियों में बदल गई। न तो इस आवाज़ को नज़रअन्दाज़ किया जा सकता था और न ही गाना जारी रखा जा सकता था। गायकों ने गाना बन्द कर दिया जिस पर वे भलेमानस बुज़ुर्ग लोग अपनी सीटों से उठे, गायकों की ओर गए, और एक-एक कर उन सबको अपने गले से लगा लिया। कोमल दा ने बातचीत के दौरान कहा, "वह ऐसी घटना थी कि विश्वास करना कठिन था।"

ऊपर लिखे प्रसंग को मैंने बिना कुछ काट-छाँट किए अनूदित किया है। इस कहानी को गुनने का काम हम एक-दूसरे पर छोड़ देते हैं -- इस बात पर सोचने का काम भी कि किसी स्थान विशेष की कला, जिसकी भाषा भी किसी नए परिवेश के लोग नहीं जानते, वह कैसे इतने बड़े सांस्कृतिक फासलों को लाँघकर अजनबी लोगों के हृदय को इस हद तक छू लेती है। और इसी घटना के साथ हम उन लोक कथाओं में प्रवेश करते हैं, जिन्हें अलग-अलग अंचलों से निकाल तूलिका प्रकाशन, चैन्नई ने हमारे लिए छापा है। लोक कथाओं पर आधारित इन समस्त पुस्तकों के ब्यौरे इस प्रकार हैं:

1. **Sweet And Salty,** (आन्ध्रप्रदेश) प्रस्तुति संध्या राव ने की है और चित्र श्रीविद्या नटराजन ने बनाए हैं।
2. **जादुई बर्तन**, (तमिलनाडु) कथा -- वायु नायडू, चित्र -- मुग्धा शाह, अनुवाद -- सुषमा।
3. **फुँकारो दोस्त, काटो नहीं**, (बंगाल) कथा -- वायु नायडू, अनुवाद -- सुषमा।
4. **कुश्ती मस्ती**, (पंजाब) कथा और अनुवाद -- संध्या राव, चित्र -- श्रीविद्या नटराजन।
5. **All Free**, (गुजरात) प्रस्तुति -- ममता पाण्डया, चित्र -- श्रीविद्या नटराजन
6. **मोरपंख पर आँखें कैसी ?** (राजस्थान)

कथा -- वायु नायडू, चित्र -- मुग्धा शाह, अनुवाद -- सुषमा अहुजा।

7. **गोल-मोल**, (बिहार) कथा -- वायु नायडू, चित्र -- मुग्धा शाह, अनुवाद - सुषमा।

इस लेख में जहाँ कहानियों के घरेलू संस्करणों का उद्धरण है, वे ए.के.रामानुजन के संकलन, **भारत की लोक कथाएँ** से लिए गए हैं।

मैंने यह सूची इसलिए बनाई है कि एक झलक में यह दिख जाए कि यह सीरीज़ एक टीम का काम है। चित्रों, कथाओं और अनुवाद में प्रायः वही के वही लोग हैं। ज़ाहिर ही यह टीम एकजुट होकर इस काम में लगी है और अपने संचित अनुभव से लगातार कुछ-कुछ नया कर और सीख रही है।

कलापक्ष

कथाओं पर चर्चा करने से पहले चलिए पुस्तकों के चेहरे-मोहरे और चित्रकला को देख लें, क्योंकि किताब को उठाकर पढ़ने के लिए इस पक्ष ने आजकल की दुनिया में बहुत अहमियत हासिल कर ली है। शायद इसका एक कारण तो यह है कि हमारे माहौल में रंगीनी और टेक्नॉलॉजी इस कदर बढ़ गई है, दृश्य मीडिया इस हद तक हावी हो चुके हैं कि चवन्नी-अठन्नी के साथ-साथ सादा दिखने वाली किताब भी किसी की नज़र में नहीं चढ़ती। गोली, टॉफी, गुब्बारे, खिलौने, वीडियो गेम और ज़बरदस्त चरमराहट और जलती-बुझती रोशनी वाले जूते अब कहीं ज़्यादा ध्यान खींचने वाली चीज़ें बन गए हैं। किसी अच्छी किताब की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए अब प्रकाशक को पहले से कहीं ज़्यादा मेहनत और खर्च करना पड़ता है। ये भी सही है कि कई प्रकाशकों ने चमचमाती हुई किताबों से मार्किट को इस कदर भर दिया है कि उन्हें देखकर दहशत होती है।

तूलिका प्रकाशन, ज़ाहिर है, मार्केट की सच्चाइयों से पूरी तरह भिज्ञ इकाई है। तूलिका में काम कर रही मुख्यतः स्त्री-प्रधान टीम स्पष्टतः मार्किट के नकारात्मक पक्ष की काट ढूँढ़ने में लगी है। वे पुस्तकों के कला-पक्ष को लेकर अत्यधिक सजग लोग हैं और अपनी विशिष्ट शर्तों पर एक ही कहानी को उन्हीं चित्रों के साथ अलग-अलग भाषाओं में छापकर, कीमत को कम करने की पूरी कोशिश करते हैं। उनकी किताबें, बावजूद इसके, एक औसत मध्यम-वर्गीय परिवार की खरीद क्षमता के घेरे में बमुश्किल ही आती होंगी। खासतौर पर अगर एक ही सीरीज़ में सात-आठ किताबें एक साथ खरीदना हो तो। इस पक्ष को हम फिलहाल छोड़े देते हैं कि ग्रामीण माहौल में इन किताबों की पहुँच की कोई सूरत निकल सकती है या नहीं। पहले किताबों के विभिन्न पक्षों के बारे में चर्चा कर लें।

लोक कथा सीरीज़ के चित्रों के विशेष गुण अपनी कहानी खुद ही कहते हैं। भारत के हर अंचल की लोक कथाएँ उन्हीं अंचलों में प्रचलित पारम्परिक चित्रों की शैलियों से सुसज्जित की गई हैं। बिहार की लोक कथा 'गोल-मोल' के साथ मिथिला चित्रों की तर्ज़ पर चित्र बनाए गए हैं, जिन्हें 'मधुबनी' चित्र कहने का चलन भी है। मधुबनी या मिथिला चित्रों की तुलना में

मुग्धा शाह के चित्रों को रखना न्यायपूर्ण नहीं होगा। लेकिन मुग्धा शाह ने चित्र कुछ इस तरह बनाए हैं कि भूत की कहानी एकदम जागृत हो उठती है। पेड़ों-पौधों, पत्तों इत्यादि में इस तरह के पैटर्न हैं कि नई-नई गिनती सीख रहे बच्चे, उन्हें तुरन्त गिनना चाहते हैं। एक जगह नदी को सिर्फ दो नीली रेखाओं से बना दिया गया है और बीच की सफेद जगह पर मछलियों, केकड़ों और कछुओं की पंक्ति है। रंगों का संयोजन भी आँखों को सुख देता है, और ये चित्र बच्चों को इतने सरल दिखाई देते हैं कि वे इन्हें देख खुद चित्र बनाने बैठ जाते हैं। सूरज और घर की दीवारों पर मिलते-जुलते तिकोन बने हैं, और कुत्ते के शरीर का पैटर्न भी इन पन्नों पर दिखने वाली अन्य चीज़ों के साथ अद्भुत संगत में है। मुग्धा शाह नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ डिज़ाइन, अहमदाबाद की छात्रा थीं, जब उन्होंने ये चित्र बनाए। निश्चित ही वे काफी दक्ष कलाकार हैं और इन किताबों की सफलता का काफी श्रेय मुग्धा शाह को भी मिलना चाहिए।

कथापक्ष और सन्दर्भ संवेदनशीलता

कथा में जादूभाई नाम का एक रईस, जो अन्य अमीर लोगों की तरह कामगार लोगों को पर्याप्त पगार नहीं देता, कालिया को भी जूते बनाने के लिए ठीक पैसा नहीं

लोक कथा - गोल-मोल, चित्रः मुग्धा शाह

देता। जब वह कालिया का बनाया बढ़िया घुमावदार नोंक वाला जूता पहनता है तो वह तुरन्त भूत में बदल जाता है। जादूभाई का नीला-सा भूत किसी तरह कालिया का गुलाम हो जाता है, और इस शर्त पर कि भूत को लगातार करते रहने को कोई काम मिलता रहेगा, वह कालिया को धन-धान्य से मालामाल कर देता है। यह लगातार काम माँगने वाला भूत दुनिया भर की लोक कथाओं में आपको मिल जाएगा।

इस कहानी में आप देखेंगे कि सभी लोगों के नाम हैं -- जादूभाई, कालिया, और यहाँ तक कि सड़क पर चलने वालों के भी नाम हैं जैसे लखनभाई, लल्लूभाई इत्यादि। मोची कालिया की पत्नी का भी प्यारा सा नाम है, स्वप्न। घरेलू बानगी में कही गई कहानियों में नाम नहीं होते- राजा, रानी, मोची, भूत, पत्नी, सास, छोटी बहू जैसी शब्दावली से काम चला लिया जाता है। जैसे-जैसे कोई कहानी घर के अन्दर से निकलकर गाँव, मोहल्ले या फिर तूलिका प्रकाशन, चैन्नई तक पहुँचती है, उसमें कई तरह की चीज़ें जुड़ती चली जाती हैं, और किसी और तरह की चीज़ें घट जाती हैं। लोक कथाओं की घरेलू बानगी को जानने वाले लोग इस बात का अन्दाज़ा ठीक से लगा सकते हैं कि कहानी में कहाँ क्या जोड़ा गया हो सकता है और क्या घटाया। जूते पहनने से पहले जादूभाई ने आँगन में चारपाई पर बैठकर हुक्का गुड़गुड़ाया। इलायची वाली गरम-गरम चाय पी। अपने नौकर भोला को सुपारी की पिटारी लाने भेजा। ये वाक्य घरू लोक कथाओं में नहीं होते। बातपोश लोग भी कहानी में तात्कालिक चुटकियाँ भर देते हैं, और वैसे ही कहानी पर बढ़त करने को ललक रहे लेखक भी।

'गोल-मोल' कहानी में क्या कोई ऐसी मिसाल भी है, जहाँ किसी चीज़ को निकाल दिया गया हो? एक उदाहरण तो भूत को दिए गए निर्देश में ही मिल जाएगा: "महुआ की फसल काटो, पूरे दो हज़ार एकड़ की। फिर उसका रस निकालो और होली के त्यौहार के लिए तैयार करो।"

ज़ाहिर है कि होली के लिए महुआ की दारू तैयार करो, इस आख्यान में से घटा दिया गया है। इसमें कोई अचरज की बात नहीं है। कहानी अगर अपने घरेलू परिवेश में पढ़ी जाएगी तो सब जानते ही होंगे कि बात दारू की हो रही है। और अगर किन्हीं वजहों से घरेलू परिवेश से बाहर वालों को 'दारू' शब्द को बच्चों की किताब में डालने से आपत्ति हो, तो यह भी सन्दर्भ संवेदनशीलता की एक मिसाल मानी जाएगी। लोक में इतना अनन्त भण्डार है कि बिना कोई बवाल खड़ा किए कोई भी अपनी ज़रूरत के अनुसार कुछ चुनकर ले सकता है। लेकिन कहानी के घरेलू परिवेश में घुसकर साफ-सफाई करने की कोशिश करना एक बिलकुल अलग बात है। और यह बहस हम किन्हीं और प्रबुद्धजनों के लिए छोड़े देते हैं। हाँ, कुछ लोग चैन्नई प्रकाशन से छपी इस कहानी में महुआ की दारू को जोड़कर ही बच्चों को सुनाएँगे -- और यह भी सन्दर्भ संवेदनशीलता की एक और मिसाल मानी जाएगी।

भिखूभाई और नारियल

गुजरात की लोक कथा "All free" के चित्र 'गरोड़ा' बातपोशों द्वारा कहानी कहने के लिए चित्र सुसज्जित कागज़ के

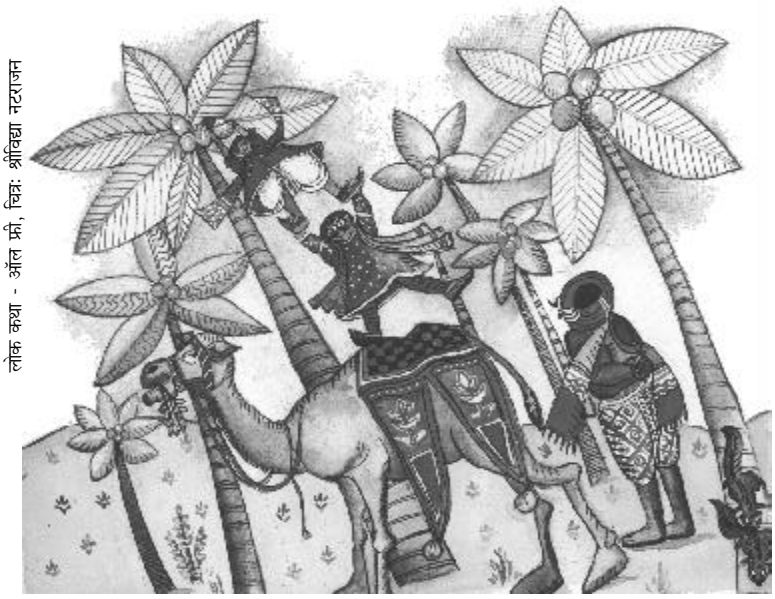

लोक कथा - ऑल फ्री, चित्र: श्रीविद्या नटराजन

मुद्दों से प्रेरित हैं। पुस्तक के पिछले कवर पर बताया गया है कि उत्तरी गुजरात के इस बातपोश समुदाय के लोग चित्र-पट्ट दिखाकर कहानी सुनाते हैं। चित्रों में भूरी पृष्ठभूमि पर बड़े शोख नीले और लाल रंग लगाए जाते हैं। चित्रों के बॉर्डर वैसे ही होते हैं जैसे बाँधनी शैली से बने कपड़ों पर। यही इस शैली के चित्रों की पहचान भी है -- यानी शोख नीले और लाल रंग और बाँधनी बॉर्डर।

इस कहानी के भिखुभाई नारियल खाने के लिए तरस रहे थे। हाट में जाकर पूछा तो दाम था दो रुपए। एक रुपए पर सौदा पक्का नहीं हुआ तो वे बड़ी मार्किट को बढ़ चले। वहाँ एक रुपए का नारियल दिखा। ऐसा करते-करते अन्ततः वे मुफ्त के नारियल के लालच में नारियल के पेड़ पर टँग जाते हैं। बड़ी आफत और कई मज़ेदार घटनाओं के बाद उनकी जान कैसे बचती है और उनके हिस्से में मुफ्त के नारियल कैसे आते हैं, इस पर कहानी खत्म होती है। श्रीविद्या नटराजन के चित्र इतने सजीव हैं, और उन्होंने अपनी तरफ से कई रोचक प्रसंग कहानी के चित्रों में जोड़ दिए हैं, जिनसे पाठक चित्रित दृश्यों में खो जाता है -- जैसे बड़े मार्किट में पूड़ी के ठेले से गाय पूड़ी उठाकर खा जाती है और पटिए पर सजे नारियल के ठेले के सामने भी और नीचे भी एक मुर्गी और चूहा अपनी विशिष्ट चित्र-शैली में सजे हुए अपलक जैसे किसी घटना को सुन रहे हों। सूरज भी मुनष्य का चेहरा लिए कहानी का दर्शक बना आसमान से अपने चेहरे की भाव-भंगिमा दिखा रहा है। नारियल को लेकर चल रहे मोल-भाव से बेखबर बन्दरगाह के पानी में एक मगरमच्छ एक

प्यारी-सी पीली मछली को लील रहा है। यह कहानी अपनी घरेलू बानगी से (जिसे कन्नड़ भाषा में 'अक्कम' कहते हैं) निकलकर पूरी तरह 'पुरम' (यानी सार्वजनिक क्षेत्र) में पहुँच चुकी है। 'अक्कम' में न किरदारों के नाम होते हैं, न स्थानों के। लेकिन एक विशिष्ट बातपोश समुदाय द्वारा इस्तेमाल की जा रही चित्र-पट्टिका के चित्रों की शैली में इस किताब के चित्रों की संगत में कहानी चमक उठती है। चित्र भी उतने ही बातपोश हैं जितना कि कथाकार या प्रस्तुति कर्त्ता। सचमुच, इन लोक-परम्पराओं की कला-सामर्थ्य हमें अचम्भे में डाल देती है। और उनसे प्रेरित अच्छी चित्रकला भी।

पुस्तक के पिछले कवर पर चित्रकार श्रीविद्या नटराजन का परिचय है -- वे गुरू-गम्भीर अकादमिक जीवन शैली से राहत पाने बच्चों के लिए चित्र बनाने लगी थीं। वे नृत्य (भरतनाट्यम) करती भी हैं और सिखाती भी हैं। चित्रकार के बारे में केवल इतनी जानकारी भर दे देने से पाठक के मन में चित्रकार को लेकर भी एक अच्छा खासा चित्र बन उठता है। पलटकर हम चित्रों को एक बारगी फिर देखते हैं और पाते हैं कि निश्चित ही चित्रकार के नृत्याँगना होने की छाया भी इन चित्रों में सहज दिख पड़ती है। चित्रों में गज़ब की लोच है।

कुश्ती-मस्ती

'कुश्ती मस्ती' पंजाब की एक लोक कथा है जो बुन्देलखण्ड में भी सुनने को मिलती है। 'पुरम' कहानियों की ही तरह मुख्य किरदारों के नाम हैं-- तरलोचन और परमजीत। इस किताब के चित्र भी श्रीविद्या

लोक कथा - कुश्ती मस्ती, चित्रः श्रीविद्या नटराजन

नटराजन ने बनाए हैं, हालाँकि शायद उन्हें पंजाब के किसी समुदाय की परम्परागत चित्र शैली न मिल पाई होगी, इसलिए ये चित्र किसी शैली विशेष से सम्बद्ध नहीं जान पड़ते। इसके अभाव में पंजाब की परम्परागत गुलकारी का इस्तेमाल किया गया है जिसे फुलकारी कहते हैं। यह फुलकारी केवल वस्त्रों में ही नहीं है, कहीं-कहीं पीछे बने पेड़ों में भी फुलकारी की छवि दिख जाती है। हालाँकि नारियल वाली किताब में जो पारम्परिक चित्रों पर आधारित थी, चित्र कहीं अधिक कलात्मक और समृद्ध थे। शुरू के पन्नों पर ही एक बड़ा-सा ट्रैक्टर है जिस पर दोनों पहलवान सवार हैं। छपाई वाले पृष्ठों पर छोटे-छोटे रेखांकन हैं, जो कि इस सारी सीरीज़ की विशेषता भी हैं। ट्रैक्टर के होने से इस कहानी के फन्तासी तत्वों को समयातीत अवकाश नहीं मिलता, हालाँकि कुछ समय के बाद सभी कुछ इतना अनहोना और मज़ेदार होने लगता है कि ट्रैक्टर भी प्रायः खप ही जाता है।

परमजीत के लिए तोहफे में हाथी लेकर जाता हुआ तरलोचन उसे उठाकर परमजीत के आँगन में फेंक देता है और बिटिया उसे चूहा समझ बैठती है। ज़ाहिर है, आकार को लेकर एक रोचक फन्तासी अस्तित्व में आ रही है। संध्या राव कोशिश करती हैं कि पंजाबी भाषा के कुछ फिक्रे और कुछ-कुछ लहज़ा भी कहानी में समाहित हो सके। यह कोशिश की गई है कि पंजाबी, हिन्दी का कुछ-कुछ प्रयोग कथा में आता रहे। 'माफ कर दो जी,' 'हाँ जी,' 'मैं तेरे को...' इत्यादि। यहाँ लेखक के लिए इतना ही सुझाव है कि एक बार ऐसे पाठ को किसी मूलभाषी को दिखा लेना चाहिए। यही बात हिन्दी की वर्तनी के बारे में भी सही है -- यानी एक बार फाइनल प्रूफ किसी ऐसे व्यक्ति को दिखा लेना चाहिए जो वर्तनी की अशुद्धियों को सुधार सके। लेकिन अपने पूरे प्रभाव में ये किताबें इतनी ज़ोरदार हैं कि त्रुटियाँ बहुत मुखर नहीं हो जातीं। कुश्ती लड़ते पहलवान चाहते हैं कि उन्हें कोई देखने वाला मिलना चाहिए। हार-जीत की फिक्र उन दोनों में से किसी को नहीं है। मालूम नहीं कि मूल कहानी में हार-जीत की बात है या नहीं, शायद नहीं है। इधर शिक्षा की सोच में प्रतिस्पर्धा जगाने वाले तत्वों से बचने की कोशिश की जाती है, ताकि खेलों का मज़ा, बिना हिंसा जगाए लिया जा सके। अगर संध्या राव ने हार-जीत के खेल को निकाल दिया है, तो नए परिवेश में यह भी सन्दर्भ संवेदनशीलता की मिसाल है।

लेकिन यह तत्व अगर हटाया भी गया है तो कहानी का मज़ा ज़रा भी किरकिरा नहीं हो जाता। फन्तासी की बानगी ऐसी है कि एक के बाद एक कल्पनातीत घटना खुलती चली जाती है। हम एक वृद्धा से मिलते हैं जिसके पास कुश्ती देखने का समय नहीं है, क्योंकि वह उस निगोड़ी जस्सो का पीछा कर रही है जो उसके 150 ऊँट लेकर भागी चली जा रही है। वृद्धा परमजीत और तरलोचन को अपनी हथेली पर चढ़ा लेती है, ताकि वे मज़े से कुश्ती लड़ते रहें। फिर वह भूल ही जाती है उन्हें और बहुत देर के बाद उसे समझ में आता है कि उसका हाथ क्यों दुखने लगा था। ऊपर जस्सो ऊँटों के साथ-साथ जैसे पूरी सृष्टि को ही उखाड़कर अपनी

चादर में भरते हुए बढ़ती चली जाती है, और आखिरकार गठरी को खोल कर एक गाँव, या एक नई दुनिया बसा लेती है, इस बीच पहलवान लड़ते-लड़ते थककर सो जाते हैं।

आकार को लेकर जो फन्तासी इस कहानी में है, बच्चों और बड़ों के लिए एक-समान रोचक है। चित्र किसी पारम्परिक शैली से उत्प्रेरित तो नहीं हैं लेकिन उनमें पर्याप्त फन्तासी और नाटकीय तत्व होने से वे बच्चों-बड़ों को काफी पसन्द आते हैं और यह किताब बच्चे बार-बार सुनना-पढ़ना चाहते हैं। 'आकार' बच्चों के लिए एक जटिल, बौद्धिक और भावनात्मक अनुभव है। इसलिए भी कि वे हम जैसे 'दानवों' से घिरे हुए हैं जो अपने आकार के बल-बूते पर ही बच्चों की दुनिया का राजपाट सम्भाले हुए दिखाई देते हैं। घर की अधिकांश चीज़ें, खासतौर पर वे जिनमें बच्चों की रुचि है, कहीं ऊपर टँगी रहती हैं, जबकि बच्चे बड़े निरापद ढंग से उनसे खेल सकते हैं (जैसे चकला, बेलन, कढ़ाही, चम्मच इत्यादि)। कोई आए तो बच्चे दरवाज़ा नहीं खोल सकते, और जो आएगा, उसे भी बच्चा वैसे ही मुण्डी उठाए देखेगा जैसे अपने माँ-बाप और बड़े भाई-बहनों को देखता है। वयस्कों के लिए इस बात का अन्दाज़ा लगाना कठिन है कि बड़े लोगों के लिए व्यवस्थित किए घर में बच्चे किन कठिनाइयों का सामना करते हैं। शायद इसीलिए जब भी आकार से छेड़-छाड़ करती हुई कोई कथा उनके सामने आती है तो वे सम्मोहित हो जाते हैं। अँग्रेज़ी की एक किताब है 'पिकनिक,' केडी मैकडोनेल्ड डेण्टन की लिखी हुई जिसमें बच्चे अपने माता-पिता को पानी में अच्छे से भिगोकर उन्हें सिकोड़ लेते हैं और फिर उन्हें टुकनिया में भरकर पिकनिक के लिए ले जाते हैं। इस बात को आसानी से समझा जा सकता है कि यह किताब बच्चों को अच्छी क्यों लगेगी। जोनाथन स्विफ्ट के उपन्यास 'गुलिवर दानवों के देश में,' और 'गुलिवर बौनों के देश में' भी इन्हीं कारणों से अपने रचनाकाल के इतने समय बाद भी इतने लोकप्रिय बने हुए हैं।

फुँकारो दोस्त, काटो नहीं

अगली तीन किताबें 'मोरपंख पर आँखें कैसी?' (राजस्थान), 'जादुई बरतन' (तमिलनाडु), और 'फुँकारो दोस्त, काटो नहीं' (बंगाल) - इन तीनों के चित्र मुग्धा शाह ने बनाए हैं और तीन की कथा प्रस्तुति वायु नायडू की है। तीनों का हिन्दी अनुवाद सुषमा अहुजा का है। हम एक कहानी की मिसाल लेकर यह देखने की कोशिश करेंगे कि 'अक्कम' कहानी को 'पुरम' में बदलने के लिए किस प्रकार के कौशल चाहिए होते हैं। 'फुँकारो दोस्त, काटो नहीं' एक ऐसे हिंसक साँप की कहानी है जो हर आने-जाने वाले को काटता था। एक साधु ने स्नेहपूर्वक उससे कहा, 'तुम मुझे काटना चाहते हो, है न? आओ अपनी इच्छा पूरी करो।'

साँप साधु की सज्जनता से इतना अभिभूत हुआ कि उसने साधु की इस नेक सलाह को मान लिया कि वह आगे से किसी को भी नहीं काटेगा।

साँप से निडर होकर अब सभी उसके साथ क्रूर व्यवहार करने लगे। बच्चे

लोक कथा - फुँकारो दोस्त, काटो नहीं, चित्र: मृण्मयी शाह

उसकी पूँछ पकड़कर घसीटते और उसे पत्थर मारते।

कुछ समय पश्चात साधु उधर अपने शिष्य से मिलने आया तो उसकी हालत देख खूब परेशान हुआ। साँप से पूछने पर कि उसकी यह हालत कैसे हुई, साँप ने उसे उत्तर दिया, 'गुरुदेव, आपने मुझे काटने से मना किया, पर लोग बहुत क्रूर हैं।'

साधु ने कहा, 'मैंने तुम्हें काटने के लिए मना किया था, फुफकारने के लिए नहीं।'

यह कहानी का 'अक्कम' रूप है जिसे वायु नायडू ने अपनी प्रस्तुति में और विस्तार देकर 'फुँकारो दोस्त, काटो नहीं' शीर्षक से किताब का रूप दिया है। वायु नायडू की कहानी के शुरू में नाग एक गाय को काट लेता है और गाय मर जाती है।

कहानी की प्रस्तुति करने वाला एक सूत्रधार भी है और 'जात्रा' का समय बाँधने वाला माहौल पैदा करने की कोशिश की गई है।

नाग और साधु के बीच का संवाद काफी लम्बा है और चित्रों में साँप का चित्र अनेक बार आता है। बल्कि जिस ओर कहानी छपी है उस ओर के हर पन्ने पर साँप के शरीर का कुछ-कुछ भाग नज़र आता है। संवादों और चित्रों को मिलाकर ब्यौरे इतने बाहुल्य में हैं कि कहानी की घरू बानगी से कथा बहुत लम्बी हो गई है। दिक्कत लम्बाई की नहीं है -- कठिनाई यह है कि बीज कहानी के कसे हुए संवाद जिनमें लाघव और दू-टूकपन है इस नई कहानी में बिलकुल भी नहीं है। ऊपर की कहानी के अन्तिम

वाक्य 'मैंने तुम्हें काटने से मना किया था, फुफकारने से नहीं' की तुलना वायु नायडू के इस टुकड़े से कीजिए:

'नादान मूर्ख!' प्यार से भिक्षु ने कहा। 'मैंने तुम्हें छोटी-छोटी बातों पर गुस्सा न करना सिखाया था। पर जब तुम्हें कोई तंग करना या चोट पहुँचाना चाहता हो, तब तुम्हें अपनी रक्षा ज़रूर करनी चाहिए। याद रखो कि तुम नाग हो। तुम्हें सिर्फ फुँकार मारनी है। इस तरह तुम अपनी रक्षा भी कर पाओगे और दुश्मन को चेतावनी भी दे सकोगे। फुँकारो मेरे दोस्त, काटो नहीं।'

कहानी जब अपनी घरू बानगी से बाहर निकलती है तो उसमें जो तत्व जोड़े जाते हैं, उन्हें बहुत सोच-समझ कर जोड़ा जाना होता है। कसावट और लाघव को बरकरार रखना ज़रूरी है, नहीं तो कहानी के लुंज-पुंज हो जाने की सम्भावना रहती है।

इस किताब के चित्र कालीघाट चित्रों की शैली से प्रेरित हैं, जिसके चित्रों की सशक्त रेखाओं के भीतर वॉटर कलर भरा जाता था। कुछ कालीघाट चित्रकार कलकत्ता में काली मन्दिर के करीब रहते हैं जिन्होंने इन चित्रों को काफी लोकप्रियता दी है। लेकिन इस किताब में चित्र भी कथानक की ही तरह कुछ लटक-से गए हैं, कुछ ढीले से पड़ गए हैं। और चित्रों में साँप ही साँप के छा जाने से यह विज़ुअल डिटेल बहुत शोर करने लगता है।

जादुई बर्तन

तमिलनाडु की कथा 'जादुई बर्तन' में एक गरीब आदमी पर वनदेवियाँ प्रसन्न

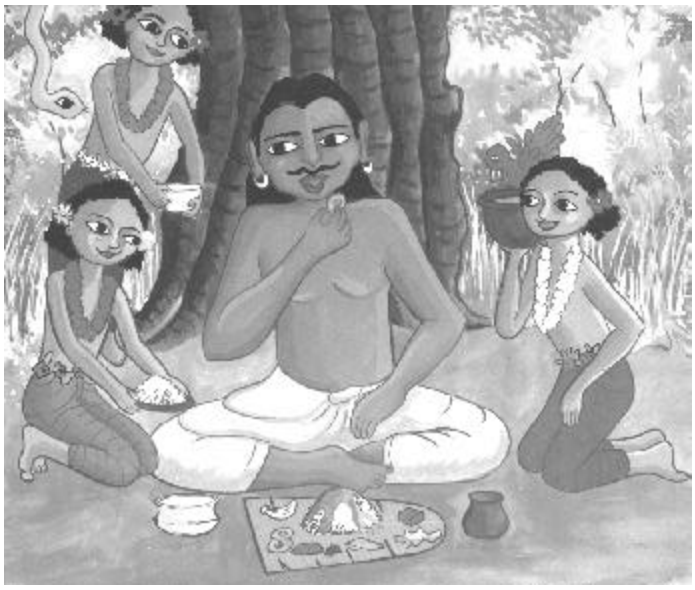

लोक कथा - जादुई बरतन, चित्र: मृधा शाह

होकर उसे जादू के ऐसे कटोरे देती हैं जिनके उपयोग से तरह-तरह के व्यंजन और उनको परोसने वाली स्त्रियाँ अस्तित्व में आ जाती हैं। फिर कोई अमीर आदमी वनदेवियों को प्रसन्न कर वैसे ही बर्तन प्राप्त कर लेता है, परन्तु जब वह मेहमानों को न्यौता देता है तो बर्तनों में से पहलवान लोग निकलकर औरतों समेत सभी मेहमानों के सर मूँड डालते हैं और अन्त में उन्हें आईना दिखाते हैं। यह 'अक्कम' कहानी का संक्षिप्त विवरण है।

वायु नायडू की प्रस्तुति में सबसे पहले वनदेवियाँ फरिश्तों (हालाँकि तमिल में फरिश्ते कहाँ हैं?) में बदल जाती हैं। यह शायद इसलिए किया गया है कि स्त्रियों की पारम्परिक भूमिका को वायु जस-का-तस प्रस्तुत नहीं करना चाहती थीं। वायु नायडू की कथा के अन्त में मुश्टण्डे दानव कटोरों में से निकलकर केवल डण्डे दिखाकर ही लोगों को भगा देते हैं। ज़ाहिर है कि लेखक ने मूल कहानी के अन्त की हिंसा को निकाल देने की कोशिश की है। लेकिन इससे कहानी के लाघव में कोई अन्तर नहीं आया। सिर्फ इतना लगता है कि रामानुजन की (अक्कम) प्रस्तुति में से कुछ विवरण अगर ले लिए जाते तो प्रस्तुति और भी सुन्दर हो सकती थी। जैसे यह वाक्य, 'पुरखे यों ही थोड़े कह गए हैं कि

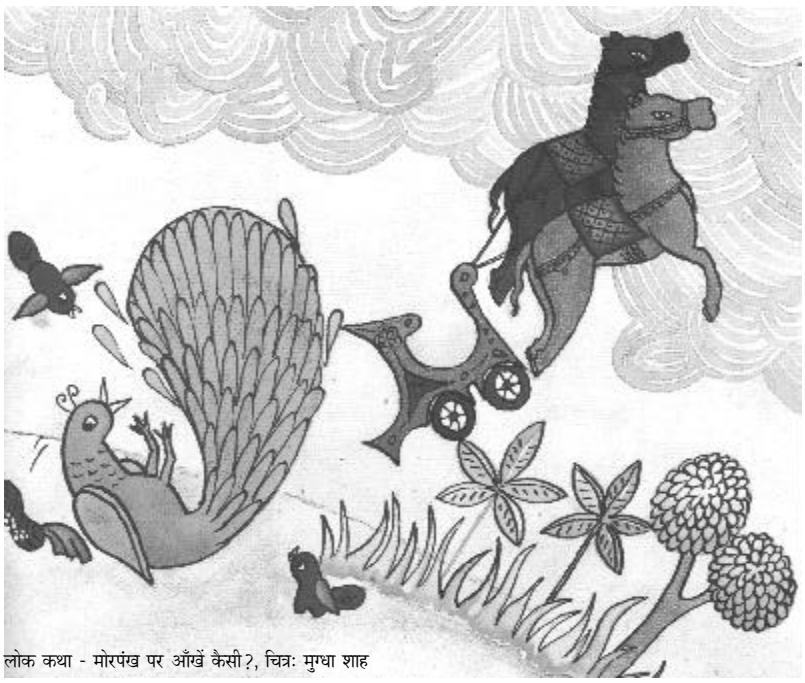

लोक कथा - मोरपंख पर आँखें कैसी?, चित्रः मुग्धा शाह

निर्धन का अतिथि शीघ्र घर लौट आता है।' प्रस्तुति में लोक में प्रचलित ऐसी उक्तियों के लिए स्थान बने रहने से कथावाचन केवल रोचक ही नहीं हो जाता, हमें उस संस्कृति विशेष के दर्शन भी कराता है। 'निर्धन' शब्द में कोई अपमान नहीं है जैसे अँग्रेज़ी के Poor में है जो कि हेय गुणवत्ता या घटिया का अर्थ देता है। लोक कथाओं का ही नहीं, बल्कि किसी भी तरह की साहित्यिक कृति के पाठक को ऐसे पाठ की ज़रूरत होती है जो उसे सांत्वना दे, ढाढ़स बँधाए, उसकी गमे-हस्ती को सम्बोधित करे। कहने का तात्पर्य सिर्फ इतना है कि अपनी प्रस्तुति को कहीं और प्रामाणिक और समृद्ध बनाने के लिए उपलब्ध 'अक्कम' संस्करणों से कहीं अधिक तत्व हमें ले लेने चाहिए, भले ही हम अपनी ओर से 'पोलिटीकली करेक्ट' लेखन करने की कोशिश कर रहे हों। यह काम एक गहरी कला-दृष्टि की माँग करता है।

मोरपंख पर आँखें

राजस्थान की कहानी 'मोरपंख पर आँखें कैसी?' में एक घमण्डी मोर की शादी आसमान में चमकते हुए सूरज राजा की बेटी से हो जाती है, और फिर अन्ततः इस अटपटी जोड़ी का तलाक हो जाता है। अकड़े हुए मोर को एक भलीमानस स्त्री को दुख देने के कारण धरती पर लौट आना पड़ा था। चित्र में पारम्परिक फड़ शैली अपनाई गई है - जिसमें पाबूजी नामक नायक की कहानी दर्शाने हेतु कपड़े पर चित्र बनाए जाते हैं। झाँझ-मंजीरे और तार वाद्यों के संगीत के साथ-साथ कथा वाचक फड़ लहराकर उत्सुक श्रोताओं को कहानी सुनाता है। लेकिन यह प्रस्तुति 'फुँकारो दोस्त, काटो नहीं' की तरह ही थोड़ी ढीली है और अगर कहानी पढ़कर सुनाने वाला अपनी ओर से कोई नाटकीय तत्व नहीं जोड़ता, तो नन्हे श्रोता कुछ ऊब से जाते हैं। इन सात-आठ किताबों को देख-परख कर ऐसा महसूस होता है कि संध्या राव कहीं अधिक कसी हुई और रोचक प्रस्तुति करती हैं, और इसी तरह ममता पाण्डया भी। वायु नायडू की प्रस्तुति में 'अक्कम' कहानी का टटकापन जाता रहता है, बुनाई कुछ ढीली पड़ जाती है।

हरिकथा: मीठी और खारी

अन्त में हम आन्ध्रप्रदेश की लोक कथा 'Sweet and Salty' को लेते हैं, जिसकी पुनः प्रस्तुति संध्या राव ने की है और चित्र श्रीविद्या नटराजन ने बनाए हैं। चित्र कोण्डापल्ली खिलौनों को बनाने की शैली से प्रेरित हैं। शोख नीले, पीले, लाल, हरे और गुलाबी रंगों से खिलौनों को सजाया जाता है - पक्षी, पशु, ग्रामीण जीवन और दस अवतारों को दर्शाने हेतु। खिलौनों पर बारीक काली-सफेद रेखाएँ भी रहती हैं जिन्हें बकरी के बालों से बने ब्रश से बनाया जाता है। नींबू की गोंद से आखिरी चमकदार पर्त लगाई जाती है (यह सब जानकारी प्रकाशक की ओर से हमें पुस्तक में ही मिलती है)। एक बार फिर से श्रीविद्या नटराजन के चित्रों की सराहना करनी पड़ेगी जो ग्रामीण जीवन की काव्यात्मक और विनोदपूर्ण झलकियाँ हमें दिखाती हैं, रंगों के अद्भुत संयोजन से (उदाहरण के लिए एक चित्र में केवल नीले और सफेद से ही रात के आसमान की झलक, जिसमें चाँद भी है, बादल भी, और एक पेड़ जो नीली

लोक कथा - स्वीट एण्ड सॉल्टी, चित्रः श्रीविद्या नटराजन

पृष्ठभूमि पर सफेद चमक रहा है) चित्रों के कोण भी रोचक हैं, जिससे महसूस होता है कि देखने वाला भी चित्र के भीतर ही है, और किसी एक कोने से उसे वह दृश्य देखने को मिल रहा है।

रामानुजन की प्रस्तुति और संध्या राव की प्रस्तुति में अन्तर बहुत कम है, केवल नाम जोड़े गए हैं और बच्चों के लिए कहानी को रोचक बनाने के लिए कुछ ऐसे संवाद जिसमें रामायण कहने वाले की प्रतीक्षा में लोग उसे मिथकीय आयाम देने लगते हैं, और ठिगने कथा-वाचक को साक्षात् देख थोड़े निराश हो जाते हैं। संध्या ने कथा में से कुछ भी ऐसा निकाल कर बाहर नहीं कर दिया जिससे घरेलू कथा का अनूठा रस जाता रहा हो।

संध्या की प्रस्तुति में बंगारम्मा अपने पति पेंचिलइया को गोरण्णगारू द्वारा प्रस्तुत की जा रही हरिकथा सुनने भेजना चाहती है, लेकिन वह आलसी आदमी इससे बहुत कतराता है। पहली रात वह कथा सुनते-सुनते सो जाता है और सुबह उसे प्रसाद स्वरूप लड्डू मिलता है। बंगारम्मा के पूछने पर कि उसे कथा कैसी लगी-- उसने

कहा मीठी। इस तरह कई रात उसके जवाब तुक्के से कुछ ऐसे निकल आते हैं कि बंगारम्मा सोचती है कि उसका पति वाकई रामायण-कथा सुन रहा है। फिर एक रात उसके खुले मुँह में कुत्ता मूत जाता है तो वह राम-कथा को छिःछिः खारी बताता है। तब बंगारम्मा समझ जाती है कि दाल में कुछ काला है-- वह उसके साथ हरिकथा सुनने खुद भी जाती है, तो वह डर का मारा कथा सुनने लगता है। जब हनुमान जी राम की अँगूठी को गलती से समुद्र में गिरा देते हैं, तो पेंचिलइया डुबकी लगाकर उन्हें अँगूठी लाकर दे देता है।

संध्या राव अनेक रोचक विवरण जोड़कर एक उत्कृष्ट 'अक्कम' कथा को एक बढ़िया 'पुरम' कथा में बदल देती हैं।

इस कथा पर रामानुजन की टिप्पणी को उद्धृत न कर पाना कठिन है: ''जब आप रामायण जैसी किसी महान कहानी को सचमुच सुन रहे होते हैं तो क्या होता है? विचित्र और जादुई चीज़ें घटित हो सकती हैं, सामान्य अड़चनें तुरन्त पार हो जाती हैं, और आप आईने के उस पार चले जाते हैं...''

रामानुजन हमारा ध्यान इस ओर दिलाते हैं कि रामायण कथा कहने वाला दृश्य को इतना सजीव कर डालता है कि सुनने वाला कहानी में पात्र की तरह खिंचा चला आता है। पेंचिलइया इतनी तन्मयता से कहानी सुन रहा था कि वह कथा में अपनी भूमिका मंचित करने लगा और इससे पूरे गाँव में उसका खूब सम्मान बढ़ा। 'सचमुच में कहानी सुनें तो ऐसा होता है,' रामानुजन की अपनी प्रस्तुति में कहानी यों खत्म होती है। निश्चित ही श्रवण की ऐसी महिमा लोक में ही सुनने को मिलती है। अपने रोज़मर्रा शहरी जीवन में हममें से कई लोगों को सूझता तक नहीं है कि 'श्रवण करने' से हमारे अन्तर्जगत में कैसी क्रान्ति पैदा हो सकती है। और 'लोक' का एक अर्थ तो शायद यही है -- तन्मय होकर सुनना।

तेजी ग्रोवर: हिन्दी कवि, कथाकार एवं अनुवादक। बाल-साहित्य एवं शिक्षा में गहरी रुचि। पिछले कुछ वर्षों से चित्रकला भी कर रही हैं।

समीक्षित लोक कथाएँ एकलव्य के पिटारा में उपलब्ध हैं।

Tulika

तूलिका के प्रकाशनों के बारे में अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क कीजिए
तूलिका पब्लिशर्स, 13 पृथ्वी एवेन्यू, अभिरामपुरम, चैन्नई 600018
वेबसाइट: www.tulikabooks.com